SHODH SAMAGAM

ISSN : 2581-6918 (Online), 2582-1792 (PRINT)

राजत्व सिद्धांत और आर्थिक सुधार की ओर अलाउद्दीन खिलजी के कदम

रेखा कुमारी, शोधार्थी, इतिहास विभाग
विनोबा भावे विश्वविद्यालय, हजारीबाग, झारखण्ड, भारत

ORIGINAL ARTICLE

Author
रेखा कुमारी

shodhsamagam1@gmail.com

Received on : 10/10/2023
Revised on : -----
Accepted on : 17/10/2023
Plagiarism : 00% on 10/10/2023

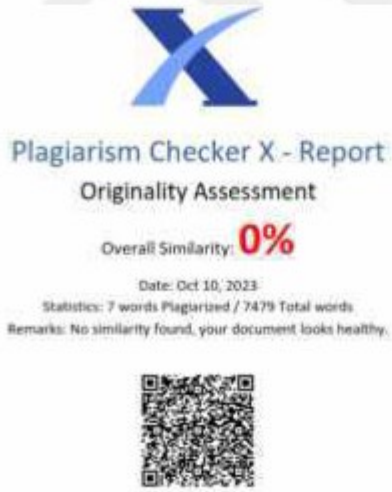

शोध सार

जलालउद्दीन खिलजी का दामाद और भतीजा अलाउद्दीन खिलजी प्रारंभ से ही अत्यंत महत्वाकांक्षी था। अपने ससुर या चाचा की हत्या कर उसने गद्दी को प्राप्त किया था। उसने मानवीय भावनाओं की उपेक्षा कर गद्दी प्राप्त की थी। उसने जलालउद्दीन की परोपकारी और मानवतावादी अवधारणा को बिल्कुल ही नकार दिया। उसके तर्क के अनुसार तत्कालीन संदर्भ में यह नीति दुर्बल शासन की प्रतीक साबित होती अतः उसने अपने शासन को आतंक के सिद्धांत पर स्थापित करना प्रारंभ किया। कहीं न कहीं शक्ति, सत्ता व राजस्व के संबंध में उसकी नीति अत्यन्त ही सफल रही। उसकी नीतियों में एकीकरण, ठोस प्रशासन, दृढ़ सुरक्षा और स्वतंत्र राज्यों पर अधिकार प्राप्त करना प्रमुख था। सत्ता संभालते ही उसने स्थानीय व केन्द्रीय प्रशासनों में सुधार की ओर कदम बढ़ाया। वह एक ऐसी प्रशासनिक एकता प्रदान करने में सफल हुआ जो मध्ययुगीन यातायात एवं परिवहन के उपलब्ध साधनों के अंतर्गत हो सकती थी। सत्ता पर अपना कब्जा जमाने के लिए उसने जघन्य अपराध या हत्या का सहारा लिया था, इसके बावजूद वह एक साहसी, सतर्क, धीर, कठोर और सफल नियोजक एवं संगठनकर्ता सिद्ध हुआ। अमीर खुसरो और इसामी दोनों ने ही अलाउद्दीन खिलजी को "भाग्यशाली व्यक्ति" माना है। उसके प्रभावशाली दुरदर्शिता से भारतवासी भी अत्यंत प्रभावित हुए थे। जोधपुर की संस्कृत शिलालेख में उसके शौर्य की व्याख्या निम्न शब्दों में की गई है– "अलाउद्दीन के देवतुल्य शौर्य से पृथ्वी अत्याचारों से मुक्त हो गई।"

मुख्य शब्द

मुफ्ती, यक अस्पा, दीवान–ए–आरिज, सद्र–ए–जहाँ काजीउल कुजात, आरक्षी.

परिचय

सत्ता पाने की महत्वाकांक्षा ने अलाउद्दीन खिलजी को जघन्य हत्या जैसे कुकर्म के लिए प्रेरित किया था। ऐसी विषम परिस्थिति में उसके पास पहली समस्या थी कि वह स्वयं को जनता के समक्ष उचित सिद्ध करे और जनता के ह्रदय में पूर्व सुल्तान के प्रति जो असीम श्रद्धा, भक्ति, प्रेम तथा लगाव था उसे वह प्राप्त करे। इसके लिए आवश्यक था कि वह राजत्व के सिद्धांत का पुनर्गठन करे। वह पूर्ववत शासको की तरह मानवीय प्रवृतियों पर आधारित राजत्व के सिद्धांत का सर्मथन नहीं करता था और ना हीं अपने कार्यों को कार्यान्वित करने के लिए धार्मिक स्वीकृति को आवश्यक मानता था। वह ऐसे राजत्व पर विश्वास करता था जिसे वह स्वयं के औचित्य से सिद्ध कर पाए।

सिंहासन पर अपनी स्थिति को सुदृढ़ बनाने के लिए उसने उदारता के साथ जन–साधारण में धन को वितरित करना शुरू किया, परिणाम स्वरूप लोगों ने उसके जघन्य अपराध को बहुत ही जल्दी विस्मृत कर दिया। सरदारों तथा अमीरों को अपने वश में करने के लिए उन्हें दरबार में उच्च पदों पर आसीन किया। जिन सरदारों ने उसकी अधीनता स्वीकार कर ली थी उन्हें प्रतिष्ठित पदों की प्राप्ति हुई, परन्तु जिसने भी उसक खिलाफ अपना सिर ऊँचा किया उन्हें इसका परिणाम भुगतान पड़ा। ऐसी परिस्थितियों में उसने मानवतावादी के सिद्धांत का परित्याग कर कठोर दण्ड की नीति का पालन किया।

राजत्व की स्थापना के लिए जनता के स्नेह और भक्ति को प्राप्त करना आवश्यक था। अतः अलाउद्दीन खिलजी ने राजत्व को पवित्र और न्यायसंगत बनाने की भरपूर कोशिश की। अपने राजत्व को वैधानिक मान्यता प्रदान कराने के लिए तथा अपने पद को स्थायित्वता प्रदान कराने के लिए प्रत्यनशील रहा। उसने राजत्व को धर्म के प्रभाव से मुक्त रखा और उसे धर्मनिरपेक्ष स्वरूप प्रदान किया जनता का समर्थन प्राप्त करने के बाद वह जन–कल्याण के कार्यों के ओर अपना कदम बढ़ाया। अंततः धनवितरण व जनहित के कार्यों द्वारा उसने अपने पद को स्थायित्व प्रदान कराने, वैधानिक मांन्यता प्राप्त करने तथा शक्ति को संकलित में सफल रहा।

शोध प्रविधि

शोध प्रबंध हेतु द्वितीयक स्त्रोतों का सहारा लिया गया है।

अवलोकन

मध्यकालीन भारत में राज्य का सर्वोच्च पदाधिकारी सुल्तान होता था। प्रशासनिक, राजनीति, आर्थिक और न्यायिक पदों पर भी उसके आदेश सर्वोपरि थे। उसके विजयों का वर्णन करते हुए अमीर खुसरो ने लिखा है कि–"सूर्य पूर्व से पश्चिम तक धरती को अपनी तलवार की किरणों से आलोकित करता है, उसी प्रकार एक शासक को भी विजय हासिल करनी चाहिए और उसे सुरक्षित रखने का प्रयास करना चाहिए।"[1] अलाउद्दीन खिलजी निःसंदेह एक महान विजेता था परन्तु उसे प्रसिद्धि एक कुशल और कर्मठ प्रशासक के रूप में मिली। अमीर खुसरो ने उसकी प्रशंसा में लिखा है कि–"उसके युग का विजेता शासक के गुणों में सर्वोत्कृष्ट है, अतः ना तो कलम और ना ही जीभ उसकी शक्ति का वर्णन कर सकती है।"[2]

अलाउद्दीन खिलजी को राजनीति का पूर्ण अनुभव था। वह अपनी समस्याओं को बुद्धिमता तरीके से हल करता था। प्रशासन को चलाने के लिए धन की आवश्यकता होती है और यह बात खिलजी अच्छी तरह समझता था। अपने राजत्व के सिद्धांत को सुरक्षित करने के लिए उसने धन का भरपूर प्रयोग किया। जनता के ह्रदय में अपनी पैठ बनाने के लिए धन का उदारता पूर्वक प्रयोग किया। अपार धन और सोने का वितरण कर उसने अमीरों और जन–साधारण वर्ग में अपना विशिष्ट स्थान बना लिया।

'अलाउद्दीन खिलजी ने अपने चाचा की हत्या कर सिंहासन को प्राप्त किया था।'[3] अतः अपने राजत्व को वैधानिक मान्यता प्रदान कराने की ओर उसने कदम बढाया। अपने राजनितिक पद को स्थिरता प्रदान करने के लिए तथा उसके अस्तित्व को बनाए रखने के लिए उसे जनमत के समर्थन की आवश्यकता थी। एक सुल्तान की सफलता जनता के समर्थन पर आश्रित थी। अतः प्रत्येक सुल्तान जनहित एवं कल्याणकारी कार्यों के लिए प्रतिबद्ध था। अतः

अलाउद्दीन ने भी जनहित कार्यों द्वारा अपने पद को स्थायित्व और शक्ति प्रदान कराने की कोशिश की।

अलाउद्दीन ने देवगिरि से प्राप्त नगद धन को जनता के उपर पानी की तरह प्रवाहित कर दिया। 'जनता भी अलाउद्दीन के विश्वास तथा कृतज्ञता को भूल कर उन धन की ओर आकर्षित होती चली गई।'[4] सभी महत्वपूर्ण पदों पर आश्रित अमीर और विभिन्न पदाधिकारी उसके पापों को भूलकर उसके पक्ष में हो गए। इन समर्थकों द्वारा उसने इब्राहिम तथा उसके समर्थकों के उपर अलाउद्दीन ने विजय प्राप्त कर ली। अपनी सफलता के बाद उसने उन विश्वासघातों को दण्डित करना शुरू किया जो धन के लोभ में अपने स्वामी को छोड़ अलाउद्दीन से आ मिले थे। 'अलाउद्दीन का मानना था कि ऐसे लोग किसी के भी विश्वासपात्र नहीं बन सकते। अतः उन्हें दण्ड मिला ही चाहिए।'[5] अपनी नीति का अनुसरण करते हुए उसने कुछ को अन्धा करवा दिया और शेष को कारावास की सजा दी।

उसने अपने प्रतिद्वन्दी को समाप्त कर एक और राज्य को आंतरिक सुरक्षा प्रदान की दूसरी ओर उसने मंगोलों के आतंक को समाप्त कर राज्य को बाह्य आतंक से बचाया। आंतरिक विद्रोह और बाह्य आक्रमण से राज्य को सुरक्षित कर वह जनकल्याण के कार्यों द्वारा राज्य को शक्तिशाली बनाने का प्रयास किया। इस उद्देश्य की प्राप्ति में उसके मार्ग में एक नहीं बल्कि कई बाधाएँ थी। आन्तरिक विद्रोहों पर पूर्ण रूप से शिकंजा कसने के लिए आवश्यक था उसके मूल कारणों को जानना और दूर करने का प्रत्यन करना। अतः अलाउद्दीन ने अपने विश्वासपात्र, बुद्धिमानों और अनुभवी व्यक्तियों से चर्चा की और चार प्रमुख कारणों की पहचान की:

1. 'पूर्व सुल्तानों ने कभी भी अपनी प्रजा की हितों की ओर ध्यान नहीं दिया। उन्होंने उनके भले–बुरे कार्यों के विषय में जानने के चेष्टा नहीं की।
2. राज्य के विरूद्ध हाने वाले षड्यंत्र प्रायः मद्यपान की सभाओं में ही होते है।
3. मलिको के बीच इतनी घनिष्ठता थी कि किसी एक के संकट में होने पर अन्य उसके सहयोगी बन कर खड़े हो जाते थे।
4. धन की अधिकता के कारण लोग अवज्ञाकारी, निष्ठाहीन, उदण्ड तथा अहंकारी बन जाते हैं।'[6]

इन चारों कारणों के निवाराण करने हेतु अलाउद्दीन ने अपने विश्वासपात्रों को अमीरों की सम्पत्ति जब्त करने का आदेश दे दिया। खालसा भूमि के उपर से अमीरों के स्वामित्व को समाप्त कर उसे कृषि योग्य भूमि में परिवर्तित कर दिया। इस प्रकार राजस्व में वृद्धि हुई और अन्य वित्तीय सुधारों द्वारा अमीरों के धन को नियमित कर दिया। गुप्तचर प्रणाली का संगठन कर उसने अमीरों के मन में भय का संचार किया। बरनी के कथनानुसार–"गुप्तचरों के भय से अमीर अपने ही घर में काँपते रहते थे और दरबार में फुसफुसाकर या संकेतों में बात करते थे।"[7]

अलाउद्दीन एक मुस्लिम शासक था लेकिन अपने शासन में उसने इस्लाम के सिद्धांतों का पालन नहीं किया। 'बरनी के अनुसार जब उसने काजी मुगीसुद्दीन से हिन्दू शासकों के बारे में बात की और उसने यह पूछा कि भेंट देनेवालों के रूप में हिन्दुओं की स्थिति क्या होनी चाहिए।'[8] काजी ने उन्हें शरा के अनुसार हिन्दुओं को "खराज गुजर" बताया और उन्हें जितना कर मागा जाए उससे अधिक अदा करना चाहिए। अलाउद्दीन ने काजी द्वारा हिन्दुओं के संबंध में दी गई सलाह स्वीकार कर ली गई क्योंकि कहीं न कहीं यह राजनीतिक तथा प्रशासकीय उद्देश्यों को पूरा करने में सहायक थी परन्तु अन्य कई बातों पर दी गई उनकी सलाह को अलाउद्दीन ने नहीं स्वीकारा। अलाउद्दीन का कहना था कि– 'ना मुझे कुछ ज्ञान है और ना ही मैंने कोई पुस्तक पढ़ी है तब भी मैं मुस्लिम पैदा हुआ था तथा मेरे पूर्वज पीढ़ियों से मुसलमान रहे हैं। उन विद्रोहों को रोकने के लिए जिनमें हजारों जीवन नष्ट हो जाते है, मैं अपनी प्रजा को ऐसे आदेश देता हूँ जो राज्य की भलाई और उनके लिए लाभदायक हो सकता है। मैं नहीं जानता 'शरा' उसकी आज्ञा देता है या नहीं। मैं नहीं जानता अन्तिम निर्णय के दिन खुदा मेरे साथ क्या न्याय करेगा।'[9] उसने धर्म पर राज्य का नियंत्रण स्थापित किया उसे यह स्वीकार ना था कि धर्म द्वारा सुल्तान के अधिकारों पर अंकुश लगा दिया जाए।

वह बलबन की भांति निरंकुश शासन पर विश्वास करता था। उसमें मौलिक विचारों को जन्म देने की क्षमता,

उसको कार्य रूप में परिणत करने का दृढ़ निश्चय और उसके परिणामों को भुगतान की क्षमता थी। एक तरफ उसने सरदारों की शक्ति पर अंकुश लगाया तो दूसरी तरफ उलेमा वर्ग को शासन में हस्तक्षेप करने से रोका। उसने शासन का पूर्णरूपेण केन्द्रीयकरण करके उस पर निरंकुशता द्वारा अपना राज्य कायम किया।

इन कारणों से धनिकों के पास धन की कमी हो गई और वे अपना ध्यान अपनी आजीविका चलाने में लगाने लगे तथा विद्रोहों पर उनका ध्यान कम हो गया। 'बरनी के कथनानुसार मलिक, अमीर, राज्य कर्मचारी, हिन्दू–मुल्तानी व्यापारी तथा सेठों के अतिरिक्त किसी के पास धन या सोना ना रह गया। उनके घर की स्त्रियाँ मुस्लिम परिवारों में घरेलू कार्यों को करने के लिए विवश हो गई।"[10]

'उसके आदेशानुसार शराब और भाँग के सेवन तथा जुआ खेलने पर प्रतिबंध लगा दिया गया। शराब का सेवन दिल्ली में पूरी तरह से प्रतिबंधित कर दिया गया।"[11] सुल्तान ने जनता का विश्वास जीतने के लिए शराब के पात्रों को सड़क पर फिकवा दिया और स्वयं भी शराब पीना छोड़ दिया। शराब का सेवन करने वालों को कठोर दण्ड दिया जाता था। शराब के इच्छुक व्यक्तियों को दिल्ली से 20–25 मील दूर जाकर शराब का सेवन करना पड़ता था, परन्तु इस अध्यादेश के पालन में कठिनाई आते देख अलाउद्दीन ने इसमें कुछ परिवर्तन जाए और लोगों को घरों में शराब बनाकर सेवन करने की छूट दी। सार्वजनिक रूप से शराब का सेवन एक दण्डनीय अपराध था।

उसने अमीरों तथा सरदारों पर अंकुश लगाना शुरू किया। 'उनके दावतों, मिलन–समारोह और वैवाहिक संबंधों पर रोक लगा दी गई। दावत, मिलन, जनता संपर्क और वैवाहिक कार्यक्रम के लिए उन्हें सुल्तान से आज्ञा लेनी पड़ती थी।"[12] पुराने सरदारों के पदों को समाप्त कर नए सरदारों की नियुक्ति कर उनपर मानसिक दबाब बनाया गया। नए सरदार सुल्तान के साथ–साथ सुल्तान के अधिकारियों की आज्ञा का पालन पूरी निष्ठता के साथ करते थे। राज्य विस्तार के साथ–साथ अलाउद्दीन ने शासन तंत्र को भी मजबूती प्रदान की। सत्ता का केन्द्रीकरण करके उसने सारी शक्ति अपने हाथों में रख ली। वह सेना का महासेनापति, सर्वोच्च न्यायिक तथा सर्वोच्च कार्यकारी शक्ति बन बैठा। सत्ता को नियंत्रित करने तथा सभी स्वेच्छाचारी तत्वों पर अंकुश लगाने हेतु उसने विशाल सेना का गठन किया। उसने धर्म को राज्य से अलग कर दिया। वह अपना सलाहकार स्वयं था। उसके राज्य में मंत्रिगण सिर्फ उसकी आज्ञा का पालन करते थे तथा प्रशासनिक कार्यों को निष्ठापूर्वक करते थे। सल्तनत में शायद ही कोई ऐसा था जो उसे सलाह देने की हिम्मत करता हो। उसने प्रशासन को सुचारू रूप से चलाने के लिए चार मंत्रियों का एक स्तम्भ तैयार किया। इन चारों स्तम्भों पर पूरे प्रशासन का आधार समाहित था। वे चार महत्वपूर्ण मंत्री पर इस प्रकार थे:

1. दीवान–ए–वजारत
2. दीवान–ए–आरिज
3. दीवान–ए–इंशा
4. दीवान–ए–रसातल

1. **दीवान–ए–वजारतः** वजीर का पद राज्य में एक महत्वपूर्ण पद हुआ करता था। वजीर को मुख्यमंत्री भी कहा जाता था। बरनी ने वजीर के पद को प्रमुख और महत्वपूर्ण बताते हुए लिखा है कि– 'एक बुद्धिमान वजीर के बिना राजत्व व्यर्थ है।"[13] अलाउद्दीन ने वजीर के पद को सैनिक नेताओं के हाथों में सौंप दिया था। वजीर का प्रमुख विभाग वित्त की देखभाल करना होता है। अतः वजीर राजस्व एकत्रित करने के साथ–साथ प्रांतीय सरकारों के दीवानी मामलों में भी हस्तक्षेप करता था और इस कार्य के लिए सुल्तान के प्रति उत्तरदायी था।
2. **दीवान–ए–आरिजः** यह प्रशासन का दूसरा प्रमुख पद था जो सैन्य व्यवस्था से संबंधित था। सेना की भरती करना, उसे वेतन देना, सेना की रख–रखाव करना, उसके साज–सज्जा तथा दक्षता की परख करना, समय–समय पर सेना की निरीक्षण की व्यवस्था करना तथा युद्ध के समय सेनापति के साथ युद्ध भूमि में उपस्थित रहना सैन्यमंत्री का प्रमुख कर्त्तव्य माना जाता था। अलाउद्दीन अपने सैनिकों के साथ हमेशा सहानुभूति रखता था। वह सहृदयता की नीति का पक्षधर था। दया की भावना रखने के कारण अलाउद्दीन

के समय सैनिकों को कठोर दंड देने का वर्णन प्राप्त नहीं होता है। शायद यही कारण है कि वह एक कुशल सेनानायक और राष्ट्र निर्माता बन सका।

3. **दीवान–ए–इंशाः** प्रशासन का तीसरा महत्वपूर्ण मंत्री दीवान–ए–इंशा होता था। राजदरबार में होने वाले सारे कार्यों, राजा द्वारा दिए गए सभी आदेशों और पत्रों का प्रारूप इसके द्वारा तैयार किया जाता था। यह स्थानीय अधिकारियों तथा प्रांतपतियों के साथ पत्र–व्यवहार करता था एवं सारे सरकारी कार्यों का लेखा–जोखा तैयार करता था। इसके कार्यों में सहायता हेतु कई सचिव हुआ करते थे जिन्हें 'दबीर' कहा जाता था।
4. **दीवान–ए–रसातलः** चौथा एवं महत्वपूर्ण मंत्री दीवान–ए–रसातल था। यह विदेश मंत्री की तरह कार्य करता था। इसका कार्य पड़ोसी देश को भेजे जाने वाले पत्रों का प्रारूप तैयार करना तथा विदेशों को जाने वाले एवं विदेशों से आने वाले राजदूतों के साथ संपर्क बनाए रखना था। इस पद के लिए किसी मंत्री विशेष का उल्लेख नहीं मिलता है। संभवतः यह मंत्रालय स्वयं अलाउद्दीन के द्वारा संचालित था।

इन चारों विभागों के अलावे राजधानी की आर्थिक मामलों के देखभाल के लिए एक नवीन मंत्रालय की स्थापना की गई, जिसे दीवान–ए–रियासत का नाम दिया गया था।

राजमहल तथा राज्य के कार्यों की देखभाल के लिए इन चार मंत्रियों के अतिरिक्त कई और अधिकारी तथा सचिव हुआ करते थे जो अपने कार्यों के लिए सुल्तान के प्रति उत्तरदायी होते थे।

न्याय प्रणाली

न्यायिक पद का सर्वोच्चतम अधिकारी स्वयं सुल्तान हुआ करता था। वह न्याय खुले दरबारों में करता था। सुल्तान के बाद दूसरा न्यायिक अधिकारी सद्र–ए–जहाँ काजीउल कुजात होता था। इसके अधीन कई अधिकारी कार्यरत थे जिनमें नायब, काजी और मुफ्ती हुआ करता थे। इनके अतिरिक्त अमीर–ए–दाद हुआ करता था जिसका प्रमुख कार्य ऐसे प्रभावशाली व्यक्ति को दरबार में प्रस्तुत करना था जिसके विरूद्ध कोई मुकदमा दायर किया गया हो और जो इतना सशक्त हो कि काजियों द्वारा नियंत्रित ना किया जा सके।

प्रांतों में भी समान रूप से ही न्याय प्रणाली को व्यवस्थित किया गया था। प्रांतों के अंदर प्रांतपति, काजी और अन्य अधिकारी न्याय व्यवस्था को सुचारू रूप से चलाते थे। गाँवों और कस्बों में न्याय प्रायः मुखिया और पंचायतों द्वारा किया जाता था। कानून व्यवस्था को चलाने के लिए किसी विशिष्ट ज्ञान की आवश्यकता नहीं थी, अतः अन्य अधिकारी, राज्य का सेनापति तथा प्रदेशों के राजकुमार भी इन मामलों का निपटारा किया करते थे। न्याय प्रणाली बहुत ही सरल और शीघ्रता से पूर्ण किया जाता था। अलाउद्दीन ने इस बात की व्यवस्था कर रखी थी कि न्यायधिकारी न्याय की पवित्रता को बनाए रखे। अत्याचारी अधिकारी को दंड दिया जाता था, अतः न्याय व्यवस्था बहुत ही निष्पक्ष हुआ करती थी। राजा स्वयं न्याय का सर्वोच्च अधिकारी होता था अतः वह स्वयं अपील सुनता था तथा निष्पक्ष न्याय करता था।

पुलिस तथा गुप्तचर व्यवस्था

प्रांतीय शासन व्यवस्था को सुचारू रूप से चलाने के लिए अलाउद्दीन ने पुलिस विभाग तथा गुप्तचर प्रणाली को अत्यंत ही प्रभावशाली रूप से संगठित किया। उसने पुलिस विभाग में कई सुधार लाने के प्रयास किए। नए–नए पदों का सृजन कर उसपर कुशल तथा प्रभावशाली व्यक्तियों को आसीन किया। पुलिस विभाग के प्रमुख अधिकारी कोतवाल को विस्तृत अधिकार प्रदान किए और उसके पद को उत्तरदायित्व पूर्ण बनाया। कोतवाल का कार्य प्रांत में शांति स्थापित करना तथा कानून की रक्षा करना था। पुलिस विभाग में व्यापारियों पर नियंत्रण हेतु नए पद 'दीवान–ए–रसातल' का निर्माण किया गया। इसी प्रकार 'मुहतसिब' का कार्य जनता के आचारण की देखभाल करना था। इसके साथ ही वह बाजारों पर भी नियंत्रण रखता था। 'शहना' या दण्डाधिकारी भी दीवान–ए–रसातल की तरह कार्य करता था।

अलाउद्दीन ने गुप्तचारों की सुदृढ़ श्रृंखला तैयार की थी। गुप्तचर अधिकारी अत्यंत कुशल और सम्राट के प्रति पूर्णतया उत्तरदायी हाते थे। जन–साधारण वर्ग में गुप्तचरों का भय इस कदर व्याप्त था कि लोग सम्राट के खिलाफ जाने की सोच भी नहीं सकते थे। शहरों पर नियंत्रण रखने के लिए अनेक बरीद नियुक्त किए जाते थे जिसका कार्य प्रत्येक छोटी–छोटी घटनाओं को सम्राट तक पहुँचाना था। इस विभाग का मुख्य अधिकारी बरीद–ए–मुमालिक हुआ करता था। बरीद के अतिरिक्त कई अन्य सूचनादाता होते थे जो 'मुनहियन' या 'मुन्ही' कहलाते थे। मुन्ही घरों में प्रवेश कर सूचनाएँ एकत्रित करते थे और गौण अपराधों को रोकने में मदद करते थे। गुप्तचर व्यवस्था की कुशलता का अंदाजा इस बात से लगाया जा सकता है कि अमीर, मलिक, अधिकारी वर्ग अपने ही घरों में काँपते रहते थे। उनके घरों में घटित होने वाले प्रत्येक घटनाओं की खबर सम्राट तक पहुँच जाती थी।

डाक–पद्धति

किसी भी राज्य के प्रशासन व्यवस्था की सफलता कुशल डाक–पद्धति पर निर्भर करती है, अतः अलाउद्दीन ने डाक–पद्धति को व्यवस्थित करने का प्रयास किया। अलाउद्दीन ने अपने साम्राज्य का विस्तार सुदूर दक्षिण तक किया था अतः साम्राज्य के विभिन्न भागों से संपर्क स्थापित करने के लिए कुशल डाक–पद्धति की आवश्यकता थी। कुशल डाक–पद्धति ने उसके इस कार्य को सुगम बना डाला था। अनेक कुशल धावकों, घुडसवारों तथा लिपिकों को डाक–चौकियों पर नियुक्त किया गया जिसका कार्य सुल्तान तक प्रत्येक खबरों को पहुँचना था। यही कारण था कि सुल्तान तक विद्रोहों तथा युद्ध–अभियानों संबंधित समाचार शीघ्रता से पहुँच जाते थे। डाक–पद्धति के द्वारा सुल्तान अपने विभिन्न नियमों को राज्यों पर लागू करने में सफल हुआ।

प्रांतीय प्रशासन

केन्द्रीय शासन व्यवस्था के आधार पर ही प्रांतीय प्रशासन को संगठित किया गया था। प्रत्येक प्रांतों में प्रांतपति नियुक्त किए जाते थे। अलाउद्दीन ने अपने राज्य को 11 प्रांतों में विभक्त किया था और प्रत्येक प्रांत एक प्रांतपति के अंतर्गत था। प्रांतपति अपने क्षेत्र का सम्राट होता था। अपने क्षेत्र में वह प्रमुख कार्यपालक तथा न्यायपालक होता था। अपने प्रांत में दरबार लगाना, न्याय के कार्यों को देखना तथा पूर्ण रूप से प्रशासन का कार्य प्रांतपति के हाथों में होते थे। उसकी स्वयं की सेना होती थी जो प्रांत की रक्षा के लिए होती थी प्रांतपति अपनी सेना को सुल्तान की सहायता हेतु भेजा करता था। अपने प्रांतों से लगान तथा राजस्व को एकत्रित कर उससे राज्य का खर्च चलाता था तथा राजस्व का एक निर्धारित हिस्सा राज्य के कोष में जमा करा दिया जाता था। प्रांतपति को 'बली' या 'मुक्ता' कहा जाता था।

प्रायः मुक्ता अपने प्रांतों में ही रहकर प्रशासन का कार्य देखता था, परन्तु कुछ मुक्ता ऐसे भी होते थे जो सुल्तान के राजदरबार में रहा कहता था और प्रांतों पर प्रशासन का कार्य अपने अधिकारियों द्वारा पूर्ण करवाता था। निष्ठावान तथा सुल्तान के प्रति उत्तरदायी मुक्ता के प्रशासन में सुल्तान द्वारा कोई हस्तक्षेप नहीं किया जाता था, परन्तु अगर मुक्ता कभी अपनी निष्ठा से विचलित हो जाता था तो सुल्तान उसे कठोर दण्ड देते थे। प्रायः मुक्ता को अपने क्षेत्रों से हटा कर दूसरे क्षेत्रों में भेज दिया जाता था। उसकी नियुक्ति, प्रोन्नति एवं उसके निष्कासन का कार्य सुल्तान द्वारा ही किया जाता था। प्रांतों से प्राप्त राजस्व के लिए वह दीवान–ए–विजारत के प्रति उत्तरदायी हुआ करता था। उसके अंतर्गत रहने वाली सेना की संख्या को भी केन्द्र द्वारा तय किया जाता था। उसके प्रत्येक कार्यों पर बरीद की नजर होती थी। कुछ प्रतिबंधों को अगर नजरअंदाज कर दिया जाए तो मुक्ता अपने प्रांतों में पूर्ण रूप से स्वतंत्र होते थे।

अधीनस्थ शासक

दक्षिण भारत के कई राजा अलाउद्दीन के अधीनस्थ शासक थे। वे प्रांतपतियों या मुक्ता से अधिक स्वतंत्र रहते थे। सुल्तान उसके क्षेत्रों में तब तक हस्तक्षेप नहीं करता था जबतक वे शर्तों के अनुसार वार्षिक कर नियमित रूप से राजदरबार में पहुँचाते रहते थे। राजा के प्रति अपनी निष्ठा व्यक्त करने के उन्हें सिक्कों पर सुल्तान का नाम अंकित करवाना पड़ता था तथा राजा द्वारा प्राप्त सभी आदेशों का पालन करना पड़ता था। इसके बावजूद वह अपने क्षेत्रों में राजस्व निर्धारित करने, न्याय संबंधी मामलों पर फैसला करने तथा अपने धार्मिक रिवाजों का पालन करने में पूर्ण रूप से स्वतंत्र थे।

खालसा क्षेत्र

केन्द्र द्वारा प्रशासित कुछ क्षेत्र खालसा या रक्षित क्षेत्र कहे जाते थे। इन क्षेत्रों में कई नगर और जिले सम्मिलित रहते थे। इसका प्रशासन कार्य अमीर तथा शहना देखते थे।

सैनिक सुधार

जियाउद्दीन बरनी के कथनानुसार राजत्व का सिद्धांत दो स्तम्भों पर आधारित होता है– जिसमें पहला प्रशासन और दूसरा विजय है। वह शासकों को सचेत करते हुए फतवा–ए–जहाँदारी में वर्णन करते है कि शासक को सेना के प्रति उदासीन नहीं रहना चाहिए। वे मानते है कि सेना के प्रति उदासीन सुल्तान स्वयं ही राज्य का विनाश कर लेता है।

किलेबन्दी

मध्यकालीन भारत में अलाउद्दीन खिलजी की सैन्य व्यवस्था अपनी एक अलग पहचान रखती है। उसने सैनिक प्रशासन का पुनर्निर्माण किया और उसे सुदृढ़ता प्रदान करने के लिए किलेबन्दी की आवश्यकता पर भी ध्यान दिया। वैसे किले जो पुराने और जर्जर हो चुके थे उनकी मरम्मत करवायी और युद्ध के लिए महत्वपूर्ण स्थानों पर नए किलों का निर्माण करवाया। इन सभी किलों में ऐसे सेनानायकों की नियुक्ति की गई जो अनुभवी तथा विवेकशील हुआ करते थे। ऐसे सेनानायकों को 'कोतवाल' कहा जाता था। किले की व्यवस्था इस प्रकार की गई थी कि उसमें आवश्यकता अनुसार अनाज, शस्त्र तथा जानवरों के लिए चारे की व्यवस्था थी।

विकेन्द्रीकृत व्यवस्था

अलाउद्दीन ने अपनी सेना का विकेन्द्रीकरण कर दिया था। सैनिकों की नियुक्ति वह स्वयं 'सीधी भरती' के अन्तगर्त करता था। सेना के लिए नगद वेतन की भी व्यवस्था की गई थी। सेना को विभिन्न इकाईयों में बाँट कर उन्हें खानों, अमीरों, सिपाहसलारों तथा मलिकों के अंतर्गत सुर्पुद किया। सेना को विभिन्न इकाइयों जैसे दस, सौ तथा हजारों की संख्या वाली दलों में विभाजित किया।

घुड़सवार और पैदल सैनिक सेना के मुख्य अंग हुआ करते थे। हाथी भी सामरिक रूप से महत्वपूर्ण थे। 'सैनिकों की लिस्ट तैयार की जाती थी जिसमें उनके नाम के साथ–साथ उनके शारीरिक गठन को सूचित किया जाता था। घोड़ों की चिन्हित करने के लिए उनको दागा जाता था।'[14] अलाउद्दीन द्वारा प्रचलित यह प्रथा धोखाधड़ी से बचने के लिए किया गया था। दाग प्रथा के कारण घोड़ों को निरीक्षण के समय दुबारा प्रस्तुत नहीं किया जा सकता था। सेना को चुस्त बनाए रखने के लिए थोड़े–थोड़े समय के अंतराल पर निरीक्षण किया जाता था। घोड़ों, सैनिकों, शस्त्रों–अस्त्रों की कड़ी और बारीकी से जाँच की जाती थी। कभी–कभी निरीक्षण का कार्य लम्बा भी चलता था।

अलाउद्दीन ने राज्य को सुदृढ़ता प्रदान करने के लिए तथा अपने राज्य को बाहरी आक्रमण से बचाने के लिए एक विशाल सेना को संगठित किया था। निरीक्षण के द्वारा नियुक्त किए गए सैनिक को 'मुर्रत्तब' कहा जाता था जिसका वेतन सुल्तान ने प्रति वर्ष 234 टंका निर्धारित किया था। मुर्रत्तब के पास कम से कम एक घोड़ा होता था। योग्यता में वृद्धि होने पर एक से अधिक घोड़े भी होते थे। दो घोड़े रखने वाले सैनिक 'दो अस्पा' कहलाता था। सैनिक को वेतन मासिक या वार्षिक तौर से प्राप्त होता था। सेना का वेतन बहुत कम था परंतु अलाउद्दीन अपनी सेना को संतुष्ट रखने का प्रयत्न करता था। उसने सैनिक के कल्याण के लिए हर संभव प्रयास किया।

आर्थिक सुधार

अलाउद्दीन ने अपनी विजय महत्वकांक्षा को पूरा करने के लिए तथा मंगोल आक्रमण से अपने राज्य को सुरक्षित रखने के लिए एक विशाल सेना का गठन किया था। इन सैनिकों पर होने वाले व्यय के साथ–साथ अन्य राज्य कर्मचारियों, प्रशासन तथा दासों का व्यय का भार भी सल्तनत पर ही था। इन व्ययों को पूरा करने के लिए उपज पर पचास प्रतिशत का कर लगाया गया। राज्य में रहने वाले लोगों को इस कर के अलावे अन्य कई कर प्रदान

करने पड़ते थे। खर्च की अधिकता का अंदाजा इस बात से लगाया जा सकता है कि सोने तथा चाँदी के सभी पेय पात्रों को गला कर सिक्कों में परिवर्तित कर दिया गया था परन्तु इसके बावजूद भी आवश्यकताओं की पूर्ति नहीं हो पा रही थी। 'विशाल सेना के व्यय को पूरा करने के लिए अलाउद्दीन ने बाजार नियंत्रण जैसे नियमों का सहारा लिया और आवश्यक आार्थिक सुधार किए।'[15]

मंडी

अलाउद्दीन ने सबसे पहले मंडी अर्थात् गल्ला बाजार को नियंत्रित करने का प्रयास किया। इसके लिए उसने कठोर अधिनियम को प्रतिपादित किया। सभी खाद्य सामग्रियो के दाम निर्धारित और निश्चित कर दिए गए। इनके मूल्यों में किसी भी प्रकार का परिवर्तन नहीं किया जा सकता था। "जैसेः–गेहूँ का मूल्य 7.5 जीतल प्रति मन, चावल 5 जीतल प्रति मन, शक्कर डेढ़ जीतल प्रति मन, घी एक जीतल प्रति ढ़ाई सेर, सरसों का तेल एक जीतल प्रति तीन सेर, नमक एक जीतल प्रति आधा मन। दालों, फलियों, चना, मोठ, जौ सभी की कीमतों को निश्चित कर दिया गया।"[16]

अलाउद्दीन के राज्य की सर्वाधिक उपलब्धि मंडी में मूल्यों की स्थिरता थी। अपने जीवन काल में उसने इन मूल्यों में वृद्धि नहीं होने दी। अनाजों का दाम निश्चित करने क उपरांत उसने अनाज का बाजार और सरकारी अनाज विक्रयालय स्थापित करना प्रारंभ किए। इन बाजारों तथा विक्रयालयों से जनता तथा दुकानदार सामग्री खरीद सकते थे। व्यापारियों की भी दो श्रेणियाँ थी–एक जिनकी स्थायी दुकानें दिल्ली के अंतगर्त थी और दूसरी अस्थायी दुकानदार, जो काफिलों में आते थे और अपनी सामग्रियों को दुकानदारों तथा खरीददारों को बेचते थे। इन कड़ाईयों के कारण व्यापारी वर्ग किसी भी प्रकार से मुनाफाखोरी नहीं कर पाते थे। वे उत्पादन की लागत से बहुत अधिक मूल्य नहीं उगाह पाते थे। इन प्रबंधों के कारण उत्पादक और व्यापारी वर्ग दोनों को ही लागत का उचित मूल्य मिल जाता था और मुनाफा खोरी भी नहीं हो पाती थी। बाजारों में अनाज बेचने के लिए व्यापारियों को अपने नाम दर्ज करवाने होते थे। अलाउद्दीन की इस व्यवस्था से बाजार में र्प्याप्त रूप से अनाज उपलब्ध रहते थे। उन्हें सरकारी गोदामों में रखे हुए अनाज को हाथ लगाने की जरूरत नहीं महसूस होती थी।

वैसे व्यापारी जो एक जगह से दूसरे जगह घूम–घूम कर अनाज बेचते थे, उनके भी हितों को ध्यान में रखा गया। 'दिल्ली और दोआब के आस–पास के क्षेत्रों में रहने वाले सभी राजस्व एकि्नत करने वाले अधिकारियों को आदेश दिया गया कि वे लिखित रूप से सुल्तान को किसानों की उपज का 50 प्रतिशत भू–राजस्व के रुप में एकत्रित कर राजकोष में जमा करेगें।'[17] इस प्रकार सारी उपज सीधे सुल्तान के पास अर्थात् अनाज मंत्री या भंडारगृह में पहुँच जाया करती थी। सुल्तान की कड़ी आदेशों के कारण मुनाफाखोरी और काला बाजारी पर नियंत्रण पा लिया गया था।

अन्न भंडार

प्रकृतिक आपदा से निपटने के लिए अलाउद्दीन ने अन्न भंडारो का निर्माण करवाया। प्रत्येक मोहल्ले में दो या तीन सरकारी भंडार होते थे। इन भंडारों से अनाज तभी निकाला जाता था जब परिस्थितियाँ अनुकूल ना हो। अनावृष्टि, अतिवृष्टि या यातायात के कारण उत्पन्न हुई समस्या से जब राज्य में अनाज की कमी हो जाती थी तब इन अन्न भंडारों का उपयोग किया जाता था। सुल्तान द्वारा राशन व्यवस्था को भी प्रारंभ करवाया गया था। इस राशन व्यवस्था के अनुसार राज्य के प्रत्येक घर को आधा मन अनाज उपलब्ध करवाया जाता था। इतना ही नहीं नगर के संपन्न व्यक्तियों को भी जरूरत के अनुसार ही अनाज प्रदान किया जाता था। यह व्यवस्था अपातकालीन परिस्थतियों में लागू की जाती थी अन्यथा नहीं। आपातकालीन परिस्थितियों मे गरीब और असहाय लोग बाजारों में इक्ठ्ठा होकर निश्चित मात्रा में अनाज प्राप्त कर लेते थे। ऐसी परिस्थितियों में भगदड़ के कारण व्यक्ति कुचल कर मारे भी जाते थे। भगदड़ पर नियंत्रण स्थापित न कर पाने के कारण शहना अधिकारियों को दण्ड का पात्र भी बनना पड़ता था। अलाउद्दीन की इस राशन पद्धति के कारण प्रतिकूल परिस्थितियों में कभी भी अनाज की कमी नहीं हुई और दिल्ली वासियों को अकाल का सामना नहीं करना पड़ा।

शहना

बाजार पर नियंत्रण बनाए रखने के लिए तथा उसे सफल बनाने के लिए सुल्तान ने कई कुशल कर्मचारियों को नियुक्त किया। 'शहना जो बाजार का अधीक्षक होता था, उसे कई अधिकार प्रदान किये गए थे। उसकी सहायता के लिए कई घुड़सवार तथा पैदल सैनिक दिए गए थे। उसका कार्य व्यापारियों पर नियंत्रण रखना, कीमतों में आनेवाले उतार या चढ़ाव तथा बाजार की प्रत्येक स्थिति की जानकारी सुल्तान को पहुँचाना था।'[18] विस्तृत अधिकार तथा ऊँचे पद के बाद भी शहना सुल्तान के खिलाफ नहीं जा सकता था और ना ही उसके आदेशों में कोई परिवर्तन कर सकता था। मामूली गलतियों या दोषों पर भी उसे दण्ड मिलता था।

सराय–ए–अदल

बदायूँ द्वार के पास एक बड़े मैदान में राज्य द्वारा सहायता प्राप्त एक ऐसा बाजार था जहाँ कई प्रकार की सामाग्रियाँ एकत्रित की जाती थी। यह सामाग्रियाँ प्रायः बाहर के प्रदेशों, अधीनस्थ राज्यों तथा विदेशों से आते थे। इस बाजार में कई प्रकार की निर्मित वस्तुएँ आती थी जिनमें जड़ी–बूटी, मेवा, तेल, कपड़ा, शक्कर इत्यादि प्रमुख है। इस बाजार में सुल्तान के आदेशानुसार सारी वस्तुएँ पहुँचाई जाती थी चाहे वह सरकारी खर्च द्वारा खरीदी गई हो या निजी खर्च द्वारा। कोई भी व्यापारी सामग्री को अपने निजी भवन या अन्य बाजार में नहीं ले जा सकता था। आदेश के विरूद्ध कार्य करने वालों की सामग्री जब्त कर ली जाती थी और उन्हें कड़ा दण्ड प्रदान किया जाता था।

वस्त्र व्यापारी

अनाज व्यापारियों की अपेक्षा वस्त्र व्यापारियों को अधिक सहूलियतें प्राप्त थी। 'वस्त्र व्यापारी दिल्ली के बाहर से वस्त्र खरीद कर लाते थे अतः उनकी लागत अधिक होती थी। दिल्ली के शहना मंडी में आकर वस्त्र बेचने से उन्हें अधिक लाभ नहीं प्राप्त हो पाता था क्योकि वस्त्रों को निर्धारित मूल्यों पर बेचना पड़ता था।'[19] अतः प्रायः वस्त्र व्यापारी दिल्ली के शहना मंडी में अपने माल को बेचना नहीं चाहते थे।

राजकीय सहायता

व्यापारी चाहे किसी भी वर्ग के हो या किसी भी धर्म के उन्हें अपना नाम दीवान–ए–रियासत में दर्ज करवाना पड़ता था। व्यापारी एकरार नामा पर अपना हस्ताक्षर करते थे कि वे एक निश्चित मात्रा में उत्पादन बाजार तक पहुँचाएगा और उसे निर्धारित मूल्यों पर ही बाजार में बेचेगा। अलाउद्दीन ने व्यापार को प्रोत्साहित करने के लिए मुल्तान के व्यापारियों को राजकोष से सहायता प्रदान की और उन्हें अग्रिम राशि उपलब्ध करवाई। ऐसा माना गया है कि इस प्रकार के व्यापारी सरकार के एजेंट के रूप में कार्य करते थे और उन्हें लाभ के स्थान पर पारिश्रमिक प्राप्त होता था।

परवानानवीस

परमिट देने वाला अधिकारी जिसकी नियुक्ति सरकार द्वारा की जाती थी। सरकार के आदेशानुसार वह परवाना तब तक जारी नहीं कर सकता था जब तक वह परवाना लेने वालों के परिचय से संतुष्ट नहीं हो जाता थां प्रायः अमीर तथा मलिक बहुमूल्य वस्त्रों को बेचने के लिए परवाना प्राप्त करते थे। काला बाजारी तथा भ्रष्टाचार पर अंकुश लगाने के लिए उसने खरीदी हुई वस्तु की प्राप्ति स्वीकृति को अनिवार्य कर दिया था। कोई भी व्यापारी सराय–अदल से सस्ती कीमतों पर वस्तु खरीद कर उसे अन्यत्र ऊँचे दामों पर बेच नहीं सकता था।

घोड़े, दासों और मवेशियों के बाजारः घोड़ों, दासो और मवेशियों के बाजार को नियंत्रित करने के लिए अलाउद्दीन ने मुख्यतः करने के लिए अलाउद्दीन ने मुख्यतः चार अधिनियम बनाए। यह चारों नियम इन तीनों बाजारों पर लागू होते थे। यह नियम इस प्रकार थेः–1) वस्तुओं की किस्मों के अनुसार उसकी कीमतों का निर्धारण 2) व्यापारी और पूँजीपति वर्ग का बहिष्कार 3) कड़े नियमों द्वारा दलालों पर नियंत्रण और 4) सुल्तान के द्वारा समय–समय पर निरीक्षण।

सेना में प्रयुक्त की जाने वाली घोड़ों को उनकी किस्मों तथा योग्यता के अनुसार विभिन्न श्रेणियों में बाँटा गया था। विभिन्न श्रेणियों के घोड़ों की कीमतें भी अलग–अलग थी। अलाउद्दीन ने दलालों के साथ कठोरता दिखा कर उन्हें अपने काबू में किया। उन्हें कम कीमत पर घोड़े उपलब्ध करवाने को विवश किया। आज्ञा की अवहेलना करने वालों को आजीवन कारावास का दंड मिलता था। घोड़ों के क्रय–विक्रय के लिए निर्धारित की गई कीमतों में किसी भी प्रकार का फेर–बदल नहीं किया जा सकता था। घोड़ों के दलाल अपने घोड़ों के साथ हर 40 दिन या 2 महिने बाद सुल्तान के सामने उपस्थित होते थे। निरीक्षण के दौरान सुल्तान उनसे विस्तृत जानकारी प्राप्त करता था और यह भी सुनिश्चित करता था कि घोड़े अपने निर्धारित मूल्यों पर ही खरीदे–बेचे जा रहे हैं। बाजारों पर नियंत्रण पाने हेतु उसने गुप्तचर नियुक्त किए हुए थे। मृत्युदंड तथा कठोर नियंत्रण के कारण हीं दलाल लोगों को ठगी का शिकार नहीं बना पाते थे।

इसी आधार पर सुल्तान ने दासों तथा अन्य पशुओं के दरों को भी निश्चित कर दिया था। बरनी ने दासों की कीमतों की सूचियाँ भी तैयार की थी। 'जैसेः– गृह कार्य हेतु दासी की कीमत 5 से 12 टंके होती थी। भोग–विलास हेतु दासी की कीमत 20–40 टंके निर्धारित की गई थी। नवयुवक और सुन्दर दास की कीमत 20–30 टंका, कार्य में निपुण दास का दर 10–15 टंका तथा कार्य में दक्षता ना प्राप्त दास का दर मात्र 7–8 टंका था।'[20] बाजार में यदि अत्यंत सुन्दर कन्या दासी रूप में जिसकी कीमत 1000–2000 होती थी बेचने के लिए लाई भी जाती थी तो कोई उसे खरीदने का साहस नहीं कर पाता था। बाजारों में गुप्तचरों का इतना आतंक था कि लोग अपने धन को उजागर करने से भी डरते थे।

मवेशियों के लिए भी ऐसे ही दरों को नियमित किया गया था। सबसे अधिक भार वाले पशु की कीमत 4–5 टंका थी। ऐसी भैंसे जो दुधारू थी मात्र 10 से 12 टंका में उपलब्ध थी । दूध देने वाली गायों का दर 3–4 टंका होता था। बकरी या भेंड़ तो मात्र 10 से 14 जीतल में ही मिल जाता था।

बड़ी–बड़ी वस्तुओं के साथ ही छोटी–छोटी वस्तुओं का दाम भी उनके उत्पादन–लागत के आधार पर तय किया गया था। बाजार में मिलने वाली प्रत्येक वस्तु की मूल्य–सूची बनाई गई थी। इन मूल्य–सूचियों को सुल्तान द्वारा स्वीकृत करवा कर वाणिज्य मंत्रालय भेजा जाता था। दीवान–ए–रियासत द्वारा नियुक्त प्रत्येक बाजार के शहना इन सूचियों को अपने पास रखते थे और उन्हें बाजार में लागू करवाने का कार्य करते थे। बाजार में भ्रष्टाचार को कम करने के लिए मुहतसिब (सेंसर) तथा नाजिर (नाप–तौल का अधिकारी) भी नियुक्त किया गया था। बाजार में सुल्तान के आदेशों का पालन हो रहा है या नहीं इसकी जानकारी प्राप्त करने के लिए प्रायः दुकानदारों की परीक्षा ली जाती थी। सुल्तान प्रायः छोटे गुलाम बच्चों को कुछ पैसे देकर विभिन्न प्रकार के वस्तुओं को लाने को कहता था। बालकों द्वारा लाए गए सामानों की शुद्धता तथा तौल में कमी आने पर कठोर से कठोर दंड दिया जाता था।

भूमि अनुदान

'अलाउद्दीन खिलजी ने सभी अनुदानित भूमि को वापस लेने का निर्णय लिया उसने इनाम, मिल्क तथा वक्फ के रूप में प्रदान की गई भूमि को खालसा भूमि में बदल डाला अनुदान की हुई जमीन को वापस लेकर उसने अधिकारियों को उसके बदले नगद वेतन देना प्रारंभ किया।'[21] अलाउद्दीन ने अनेक उपायों द्वारा अमीरों तथा अन्य समृद्धशाली व्यक्तियों को समृद्धहीन बना डाला था। बरनी के अनुसार खुत, मुकद्दम, अमीर के विशेषाधिकार को समाप्त कर उनके अहंकार को नष्ट करने का प्रयत्न किया गया। उनके पास धन का अभाव हो गया। वे घुड़सवारी करने, अच्छे वस्त्र पहनने तथा विलासिता पूर्ण जिंदगी व्यतीत करने से महरूम कर दिए गए।

कर व्यवस्था

अलाउद्दीन ने भूमि कर की नई व्यवस्था को लागू किया। उसने भूमि की वास्तविक आय पर राजस्व को निर्धारित किया। 'सभी प्रकार की जमीन पर 50 प्रतिशत की एकीकृत दर से लगान को वसूला गया।'[22] लगान की दर अधिक होने के कारण जमींदारों की स्थिति में गिरावट आई। वे जमींदार ना रह कर कृषक वाली स्थिति में पहुँच

गए थे। उन्हें कई प्रकार की आर्थिक कठिनाईयों का सामना करना पड़ा था।

भूमि पर राजस्व के रूप में कर लगाने के पीछे अलाउद्दीन द्वारा राजकोष की उन हानियों को पूरा करना था जो शराब बंदी तथा जुआ के अड्डे को बंद करवाने से उत्पन्न हुए थे। इसका दूसरा कारण गोदामों को अनाज से भरना भी था जो आपातकालीन स्थिति के लिए एकत्रित किया जाता था। तीसरे कारण में नगद वेतन को लिया जा सकता है जिसकी भरपाई करने के लिए भूमि पर इतना कर लगाया गया था। राजस्व का स्वरूप नगद और अनाज दोनों ही था।

अन्य कर

भूमि कर, अतिरिक्त पशु कर, चराई कर, आवास कर इत्यादि थे। 'दूध देने वाले मवेशी जैसे गाय, बकरी, भैंसे पर भी कर लगाया गया।'[23] फरिश्ता के अनुसार सुल्तान ने दो जोड़ी बैल, एक जोड़ी भैंस, दो गाएँ और दस बकरियों को कर से मुक्त रखा था। "करी" या "करही" नामक गौण कर का उल्लेख मिलता है।

जजिया

वैसे व्यक्ति जो गैर–मुस्लिम थे उनसे 'जजिया' कर लिया जाता था। स्त्री, बालक, विक्षप्त तथा अपंग व्यक्ति जजिया कर से मुक्त होते थे।

खुम्स

यह युद्ध में लूट से प्राप्त होने वाला कर था। पहले राज्य को खुम्स का 5वाँ हिस्सा प्राप्त होता था बाकी सैनिक आपस में बाँट लेते थे। अलाउद्दीन ने इस नियम को परिवर्तित कर पाँचवा हिस्सा सैनिकों के लिए तथा 4/5 भाग राज्य के लिए रखा।

जकात

धार्मिक कर जो प्रायः मुसलमानों से वसूला जाता था तथा यह संपत्ति का 40वाँ भाग होता था। अलाउद्दीन कालीन इतिहासकार इस पर मौन है तथा कोई विशेष जानकारी प्राप्त नहीं होती है।

कर वसूली प्रणाली के दोषरू विशाल क्षेत्रों को खालसा भूमि में बदल दिए जाने के कारण कई बार राजस्व बिना वसूल की हुई ही रह जाती थी। इस व्यवस्था के कारण निचले दर्जे के कई राजस्व कर्मचारियों को नियुक्त किया गया था जो राजस्व वसूली में सहायता प्रदान करते थे, परन्तु इनमें से कई अधिकारी भ्रष्ट तथा रिश्वतखोर होते थे।

'इस समस्या से निजात पाने तथा भ्रष्टाचार को रोकने के लिए अलाउद्दीन ने एक नए विभाग का गठन किया जिसे दीवान–ए–मुस्तखराज कहा जाता था।'[24] इसके अधिकारी राजस्व एकत्रित करने वाले अधिकारियों के कार्यों पर नजर रखते थे। वे अधिकारियों के नाम बकाया राशि वसूल करने का प्रयास करते थे। अलाउद्दीन ने अनुदान भूमि के जगह नगद वेतन का प्रबंध किया था तथा समय–समय पर उसमें वृद्धि कर भ्रष्टाचार को रोकने का प्रयास किया था। ईमानदारी को प्रोत्साहन देने हेतु उसने कठोर दंड व्यवस्था भी लागू की थी। अमीरों को विशेषाधिकार समाप्त कर उन्हें नियंत्रण में लाने का प्रयास किया, परन्तु इस अर्थव्यवस्था का सीधा असर कृषक वर्ग पर भी पड़ा। अनेक प्रकार के कर जैसेः– चराई, धराई, पशु कर तथा राजस्व के रूप में अनाज का 50 प्रतिशत कर अदा कर पाना संभव नहीं था। इतना ही नहीं किसानों को अन्नागार में अनाजों की पूर्ति हेतु अपने अनाजों को नियमित दरों में बेचना पड़ता था जिससे उन्हें अतिरिक्त लाभ नहीं प्राप्त हो पाता था अतः किसानों की स्थिति अत्यन्त ही दयनीय थी।

अलाउद्दीन द्वारा बाजार नियंत्रण की प्रक्रिया को लागू करने के पीछे के कारणों को जाँच करने से पता चलता है कि इसके पीछे कई उद्देश्य छिपे हुए थे। जैसेः–दिल्ली उस समय सल्तनत की राजधानी हुआ करती थी। मुख्य शहर होने के कारण लोग व्यापार और आवागमन के दिल्ली पहुँचना शुरू हुए। व्यापारिक रूप से समृद्ध केन्द्र होने के कारण यह लोगों के आर्कषण का केन्द्र बन गई थी। लोगों ने इस शहर को स्थायी रूप से निवास बनाना प्रारंभ

किया जिससे यहाँ की जनसंख्या में भारी वृद्धि हुई। इसके साथ ही अलाउद्दीन राज्य की सुरक्षा तथा साम्राज्य विस्तार हेतु एक विशाल सेना का गठन किया था। सेना के भरण–पोषण के लिए नगद वेतन की आवश्यकता हुई। अतः उसे बाजार नियंत्रण की आवश्यकता हुई। कुछ इतिहासकार मानते हैं कि जनसंख्या तथा मुद्रा के प्रचलन में विस्तार होने के कारण वस्तुओं की कीमतों के बढ़ जाने की संभावना थी। कीमत में वृद्धि भ्रष्टाचार, वस्तु संग्रह, कालाबाजारी तथा चोर बाजारी जैसे कुप्रथाओं को जन्म देती। यह व्यापारी वर्ग को जनसाधारण का शोषण करने का अधिकार प्रदान कर देती। अतः अलाउद्दीन ने समस्याओं से निपटने के लिए बाजार नियंत्रण की प्रक्रिया को प्रयोग में लाया। डॉ. डे. के अनुसार– "अलाउद्दीन का मुख्य उद्देश्य वस्तुओं कीमत में होने वाली वृद्धि को रोकना था ना कि उनके सामान्य रूप से प्रचलित मूल्यों को कम करना था।"

कुछ इतिहासकार उसके बाजार–नियंत्रण के उद्देश्य को मानवीय रूप देते है। उनका मानना कि वे अपनी प्रजा के हित के लिए कार्य कर रहे थे। प्रजा को दैनिक जरूरत की वस्तुओं को पर्याप्त मात्रा और उचित मूल्य पर प्राप्त करवाना हीं उसका प्रमुख उद्देश्य था। उसका उद्देश्य प्रजा की भलाई था। उसके बाजार नियंत्रण के उद्देश्य को तत्कालीन कई लेखकों द्वारा भी सराहा गया है। शेख नासिरूद्दीन ने अपने ग्रंथ 'खायरूल–मजलिस' में शेख हमीदुद्दीन के संवाद द्वारा इसे दर्शाया है। 'खजाइल–नुल–फूतूह' जो अमीर खुसरो द्वारा रचित है में भी अलाउद्दीन के आर्थिक सुधारों की प्रशंसा की गई है।

निष्कर्ष

विषम परिस्थितियों में सत्ता को हासिल कर उसे सुव्यवस्थित बनाए रखना तथा आंतरिक एवं बाह्य आक्रमणों से मुक्त रखने के साथ–साथ जनता के लिए आर्थिक सुधार जैसे कार्यक्रमों को लागू करना किसी भी शासक के लिए आसान कार्य नहीं होता है, परन्तु मध्ययुगीन दिल्ली सल्तनत के शासक अलाउद्दीन खिलजी ने इस मुश्किल और असंभव से प्रतीत हुए कार्य को सफलता के साथ पूर्ण किया। आवश्यकता के अनुरूप विशाल सेना का गठन और उसके निर्वाह के लिए बाजार नियंत्रण को कठोरता से लागू करना तत्कालीन समय की माँग थी। उसने दैनिक जीवन में काम आनेवाली सभी वस्तुओं के दाम को निश्चित कर उसके क्रय–विक्रय के लिए अलग–अलग बाजार निर्धारित किए। कठिन अवसरों पर सुरक्षा के लिए तथा जनता का भरण–पोषण के लिए सरकारी गोदामों तथा अन्नभंडारों का निर्माण करवाया, जहाँ व्यक्तियों के आवश्यक वस्तुओं की खरीदारी की सीमा निश्चित कर दी गई थी। किसानों और व्यापारियों को शहना–मंडी में पंजीकृत किया गया। वस्तुएँ केवल निश्चित मूल्य पर ही क्रय और विक्रय की जा सकती थी। मूल्यों में तब तक परिवर्तन की कल्पना भी नहीं की जा सकती थी जबतक सुलतान स्वयं ना आदेश दे दे। बाजार पर नियंत्रण रखने के लिए बरीद–ए–मंडी, मुन्हीयान नियुक्त किए गए। कार्यों को सुचारू रूप से चलाने के लिए दिवान–ए–रियासत, शहना मंडी तथा न्याय के लिए सराय–ए–अदल नामक अधिकारी की नियुक्ति की गई। माप–तौल को भी निर्धारित किया गया। वस्तुओं की शुद्धता की जाँच की व्यवस्था की गई। कम तौलने तथा मिलावट वाला वस्तु बेचने पर कड़ा दण्ड दिया जाता था। कम तौलने वालों के शरीर से उतनी मात्रा में माँस निकाल लिया जाता था। बड़े से बड़े अधिकारी तथा अमीर भी नियमों में परिवर्तन नहीं कर पाते थे।

अलाउद्दीन द्वारा लागू की गई बाजार नियंत्रण की व्यवस्था ने उसे अपने लक्ष्य को हासिल करने में काफी मदद पहुँचाई। जबतक वह जीवित रहा ना तो वस्तुओं के कीमतों में वृद्धि हुई ना ही कमी। दिल्ली में रहने वाले लोगों के लिए यह लाभदायक प्रतीत हुई। उसकी बाजार नीति की सफलता के बावजूद यह कहना गलत ना होगा कि यह जन–साधारण के लिए हितकारी साबित नहीं हुई। यह नीति ना तो राज्य के अन्तिम हितों को प्राप्त करने में सफल हो पाई और ना उसे स्थायी स्वरूप प्रदान कर पाई। ना तो यह किसानों को सुखी सम्पन्न रख पाई ना ही कारीगर तथा व्यापारी वर्ग को। किसानों को अपनी फसल का आधा हिस्सा लगान स्वरूप अदा करना पड़ता था। राजस्व के आलावे कई अन्य कर उन पर लादे गए थे। कारीगर वर्ण द्वारा बनायी गई वस्तुएँ निर्धारित मूल्यों से अधिक लाभ नहीं प्राप्त कर पाते थे। व्यापारियों का लाभ हित पूरी तरह से साम्राज्य के हाथों में था। कहने को तो यह आर्थिक नीति थी परन्तु यह आर्थिक नीति के विपरित थी। अतः यह अलाउद्दीन के मृत्यु के साथ ही समाप्त हो गई।

संदर्भ सूची

1. वर्मा, हरिश चन्द्र, *मध्यकालीन भारत भाग– 1(750–1540),* हिन्दी माध्यम कार्यान्वय निदेशालय, दिल्ली विश्वविद्यालय, 2015, पृ. सं.– 171।
2. उपरोक्त, पृ. सं.– 172।
3. मेहता, जे. एल., *मध्यकालीन भारत का बृहत इतिहास प्रथम खंड (1000–1526),* जवाहर डिस्टीब्यूटर्स, नई दिल्ली, 2004, पृ. सं.– 174।
4. मेहता, जे. एल., म*ध्यकालीन भारत का बृहत इतिहास प्रथम खंड (1000–1526),* पूर्वोक्त, पृ. सं.– 175।
5. शर्मा, एल. पी., (1973) *दिल्ली सल्तनत,* लक्ष्मी नारायण अग्रवाल पब्लिशर्स, आगरा, पृ. सं.– 167।
6. उपरोक्त, पृ. सं.–144।
7. उपरोक्त, पृ. सं.– 170।
8. वर्मा, हरिश चन्द्र, *मध्यकालीन भारत भाग– 1,* (750–1540) पूर्वोक्त, पृ0 सं0– 175।
9. शर्मा, एल. पी., *दिल्ली सल्तनत,* पूर्वोक्त, पृ0 सं0– 141।
10. बरनी, *तारीख ए फिरोजशाही,* E & D III, भारतीय पुनर्मुद्रण, किताब महल, पृ. सं.– 178।
11. चन्द्र, सतीश, *मध्यकालीन भारत,* सल्तनत से मुगल काल तक, प्रथम भागः दिल्ली सल्तनत (1206–1526), जवाहर पब्लिशर्स एण्ड डिस्टीब्यूटर्स, नई दिल्ली, 2004, पृ. सं.– 7।
12. वर्मा, हरिश चन्द्र, *मध्यकालीन भारत भाग– 1* (750–1540) पूर्वोक्त, पृ0 सं0– 174।
13. उपरोक्त, पृ. सं.– 176।
14. शर्मा, एल. पी., *दिल्ली सल्तनत,* पूर्वोक्त, पृ. सं.– 151।
15. श्रीवास्तव आर्शीवादीलाल, *दिल्ली सल्तनत,* (711 से 1526 तक), शिवलाल अग्रवाल एण्ड कम्पनी प्राइवेट लि0, पृ. सं.– 173।
16. चन्द्र, सतीश, *मध्यकालीन भारत,* सल्तनत से मुगल काल तक, पूर्वोक्त, पृ. सं.– 77।
17. मेहता, जे. एल., मध्यकालीन भारत का बृहत इतिहास प्रथम खंड (1000–1526) पूर्वोक्त, पृ. सं.– 206।
18. उपरोक्त, पृ. सं.– 206।
19. उपरोक्त, पृ. सं.– 207।
20. वर्मा, हरिश चन्द्र, *मध्यकालीन भारत भाग– 1* (750–1540) पूर्वोक्त, पृ. सं.– 186।
21. चन्द्र, सतीश, *मध्यकालीन भारत,* सल्तनत से मुगल काल तक, पूर्वोक्त, पृ. सं.– 72।
22. शर्मा, एल. पी., *दिल्ली सल्तनत,* पूर्वोक्त, पृ. सं.– 148।
23. मेहता, जे. एल., *मध्यकालीन भारत का बृहत इतिहास प्रथम खंड,* (1000–1526) पूर्वोक्त, पृ. सं.– 208।
24. शर्मा, एल. पी., *दिल्ली सल्तनत,* पूर्वोक्त, पृ. सं.– 149।

****